IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

संगीतः नाद एंव गति का भव्य मिश्रण

(Music: A grand combination of sound and Rhythm)

डॉ0 आरती सिसोदिया
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
संगीत विभाग
एम0के0पी0 (पी0जी0) कॉलेज
देहरादून, उत्तराखण्ड
भारत

स्वरों की गति का सूक्ष्म रूप नाद द्वारा प्रकट हो जाता है और गति के रूप द्वारा स्वरों के रूप में गति तीव्र हो जाती है, जिनके योग से लयात्मक सौन्दर्य का मूर्त रूप निखर आता है। इसी को ''संगीत'' कहते हैं।[1] अतः नाद तथा गति के व्यवस्थित रूप धारण करने पर संगीत कला का प्रदुर्भाव होता है।

नाद का पर्याय 'ध्वनि' है। यदि हम प्रकृति की ओर दृष्टिपात करेंगे तो यत्र–तत्र–सर्वत्र ध्वनि ही सुनाई देती है। झरने की झर–झर में, पक्षियों की चहचहाहट में, वायु के मन्द–मन्द झोंकों में, वर्षा की टप–टप टपकती बूंदों में, बादलों की गर्जना आदि प्रत्येक वस्तु में ध्वनि ही है जो संगीत में नाद बनकर समाहित है। परन्तु संगीत के सन्दर्भ में रंजक ध्वनि ही नाद कहलाती है। हमारे पण्डितों और दार्शनिकों ने इस ध्वनि को 'नाद–ब्रह्म' की संज्ञा दी है।

भारतीय दर्शन के अनुसार सम्पूर्ण मानव जगत का व्यवहार नाद के अधीन है–

''नादेन व्यज्यते वर्णः पदं वर्णात्पदाद्वचः।
बचसो व्यवहारोऽयं नादीधीनमतो जगत्।।'' (सं0 रत्नाकार 1/2/2)

अर्थात नाद से वर्ण की, वर्ण से पद की और पद से वाणी की अभिव्यक्ति होती है। वाणी से ही यह सब व्यवहार चलता है। अतः यह सम्पूर्ण जगत नाद के अधीन है।[2] नाद एक ऐसा अदृश्य शक्तिमान तत्व है जो कि संसार में सर्वत्र व्याप्त है।

संगीत रूप नाद ब्रह्म अद्वितीय है। इसका पार जाना सरस्वती के लिए भी कठिन है– ''नादाब्धेस्तु परं पार न जानति सरस्वती।''[3]

'वायु' (प्राण) और 'अग्नि' इन दो तत्वों से 'नाद' की उत्पत्ति मानते हुए, संगीत रत्नाकर में लिखा है–

'नकारं प्राणानामानं दकारमनलं विदुः।
जातः प्राणाग्निसंयोगात्तेन नादोऽभिधीयते।।6।।
(संगीत रत्नाकर, प्रथमः स्वरगताध्यायः तृतीय प्रकरणम!)

वायु और अग्नि की टक्कर के संयोग से देहों में आहत नाद का प्रकट हो जाना, जो हजारों वर्ष पूर्व के हमारे आचार्यो ने सिद्ध किया था, वही तथ्य आज रेडियो द्वारा अग्नि–रूपिणी विद्युत–शक्ति और वायु–लहरी के आघात–संयोग की नाद शक्ति को आधुनिक विज्ञान ने सिद्ध करके दिखा दिया है।[4]

इस प्रकार इस नाद के दो भेद माने गये हैं– एक आहत तथा दूसरा अनाहत। 'आहत नाद' आघात या घर्षण से उत्पन्न तथा प्रत्यक्ष सुनाई देने वाला, संगीतोत्पत्ति का मूल कारण है। इसके विपरीत बिना आघात से ही उत्पन्न, स्वयंभू में अनुभव किया जाने वाला नाद 'अनाहत नाद' कहलाता है।

नाद नियमित कम्पनों (Frequencies) का समूह है। सुनने में नाद भले ही अखण्ड और अटूट प्रतीत होता हो, परन्तु वास्तविकता में वह ध्वनि तरंगों का समूह है। जब दो वस्तुऐं परस्पर टकराकर घर्षण पैदा करती हैं, यह घर्षण पास की वायु को आन्दोलित कर कम्पन पैदा करता है जो हमारे कर्ण रन्ध्रों के माध्यम से हमारे मस्तिष्क को जागृत कर हमारी चेतना को ध्वनि का आभास कराता है।

अतः वैज्ञानिक दृष्टं से नादोप्पत्ति ध्वनि आन्दोलनों का परिणाम है। यदि ध्वनि आन्दोलन का कम्पन अनियमित हो तो उससे उद्भव नाद संगीतोनुपयोगी होगा तथा यदि ध्वनि आन्दोलन नियमित कम्पन युक्त हो तो उत्पन्न नाद संगीतोपयोगी होगा। इस प्रकार गति अथवा लय संगीत का पहला तथा प्रमुख तत्व है।

गति न केवल संगीत की मुख्य भित्ति है अपितु समस्त जीवन ही उसी पर अवलिम्बत है।[5] संगीत की इस गति को 'लय' कहते हैं।

डा0 अरूण कुमार सेन लय की महत्ता प्रतिपादित करते हुए लिखते हैं–

'लय ध्वनियाँ निश्चित ही उन ध्वनियों से श्रेष्ठ है, जिसका सृजन लयविहीन रूप में होता है। सुन्दर वस्तुओं के लिए Keats ने कहा है– A thing of beauty is joy for ever, इसे ही बदलकर यदि कहें– "A sound in rythjm is a joy for ever" तो घृष्टता न होगी।[6]

लय के जन्म के साथ ही उसको प्रदर्शित करने के लिए किसी क्रिया की आवश्यकता पड़ी और ताल का जन्म हुआ। इस प्रकार लय स्वयं में एक व्यापक क्रिया है, जिसको वान्छित अन्तराल में बाँधकर प्रदर्शित करना 'ताल' कहलाता है।

नाद–प्रवाह के कारण चित्त की जड़ना भंग होकर द्रवणशील हो जाती है। जब रूप में संगतियुक्त सन्तुलित गति का प्रादुर्भाव हो जाता है तब जीवन–प्रवाह में लय की सृष्टि हो जाती है।[7]

ब्रह्माण्ड में समस्त जड़–चेतन, प्राणी–नक्षत्र, पेड–पौधों के क्रिया कलाप एक निश्चित गति और समय के अनुसार ही होते हैं। कल–कल बहती नदियों में, निर्झरों के शाश्वत प्रवाह में, रात–दिन और ऋतुओं के नियमित चक्र में तथा जीवन की प्रत्येक अवस्थाओं के विकास में इस सन्तुलित गति की उपस्थिति अनुभव होती है। समय की यही निश्चित गति साहित्य में 'छन्द' बनकर तथा संगीत में 'ताल' बनकर समाहित है।

संगीत रत्नाकर में 'तालाध्याय' के प्रारम्भ में ही ताल की व्याख्या इस प्रकार है–

'तालस्तल प्रतिष्ठायमिति घातो धात्रि स्मृतः।
गीतं वाद्यं तथा नृत्यं यत ताले प्रतिष्ठितम्।।'

जिसका अर्थ है तल् धातु में घत्र प्रत्यय लगाने से 'ताल' शब्द बनता है। 'तल' का अर्थ है प्रतिष्ठित करने वाला अर्थात गायन, वादन तथा नृत्य तीनों जिसमें प्रतिष्ठित होते हैं, वह ताल है। प्रतिष्ठा का अर्थ वास्तविकता में आधार प्रदान करना है। इससे स्पष्ट है कि ताल संगीत को आधार प्रदान करने का कार्य करती है व उसे उपयोगी, रसपूर्ण और स्थायी स्वरूप देती है। जिस प्रकार समस्त सृष्टि–क्रम में क्रमिक गति द्वारा काल की नियमितता दृष्टिगोचर होती है उसकी प्रकार संगीत के क्षेत्र में मनुष्य द्वारा दी गयी ताल व्यवस्था द्वारा संगीतिक काल की नियमितता प्राप्त होती है, यही नियम आनन्द एवं सौन्दर्य का सृजन कर कला को जन्म देता है।

'ताल' संगीत में विभिन्न सौन्दर्यपूर्ण चलन शैलियों का विकास करता है, जिससे संगीत के संयम की रक्षा होती है। 'ताल' संगीत को अनुशासित कर उसके सुगठित रूप स्थायित्व एवं चमत्कारिता से श्रोताओं को विभोर कर देता है।[8]

ध्वनि एवं गति सूक्ष्म होने के कारण सर्वकालिक है। यह सर्वत्र उपस्थिति रहती है, इसका न तो कोई आदि है तथा न ही कोई अन्त। संसार के समस्त क्रिया–कलाप ध्वनि और गति पर आधारित हैं जो कि गायन, वादन तथा नर्तन में 'नाद' तथा 'ताल' के माध्यम से उपस्थित रहते हैं। यदि एक हृदय है तो दूसरा उसकी धड़कन, यदि एक मस्तिष्क है तो दूसरा उसमें जन्में विचार, यदि शरीर है तो दूसरा उसमें निहित प्राण। नाद और ताल संगीत रूपी व्यक्ति की मेरूदण्ड है, जिसके बिना शरीर न ता स्थिर रह सकता है और न ही किसी कार्य करने मं सक्षम है या ऐसा कहें कि नाद व गति के बिना संगीत का कोई अस्तित्व ही नहीं है तो यह कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। नाद और गति उस संगीत का आधार है जिसकी अविरल धारा चराचर जगत में सदियों से वर्तमान तक प्रवाहित होती चली आ रही है।

संगीत की यह सम्मोहिनी शक्ति उसके मूल से ही आयी है। नाद एवं गति इस विश्व के बीज रूप में हैं, परिष्कृत रूप में स्वर तथा लय में अपने को आत्मसात कर मानव परम तुष्टि का अनुभव करता है। अतः नाद एवं गति की व्याप्ति के कारण उसके बाह्य रूप, स्वर तथा लय के प्रति आकर्षण होना भी स्वाभाविक है।[9]

इस प्रकार जहाँ नाद है वहाँ लय अनिवार्य है। यह समस्त ब्रह्माण्ड नाद एवं लय गति से बंधा है तथा यही 'नाद शक्ति' एवं 'ब्रह्मशक्ति' मिलकर आनन्द का सृजन करते हैं। नाद और गति व्यवस्थित रूप धारण कर संगीत कला को जन्म देती है। इसी नाद व गति के अद्भुत संयोजन से मानस मन में झंकृत हर्ष–विषाद, प्रेम–द्वेष आदि भावों को अभिव्यक्त कर परमानन्द प्राप्ति का साधन बन 'संगीत' कला के रूप में सर्वोच्च स्थान रखता है।

सन्दर्भ ग्रन्थः

1. नर्मदेश्वर चर्तुवेदी– ''संगीत और सौन्दर्य'' (स्मारिका– द्वितीय अखिल भारतीय तानसेन संगीत सम्मेलन, आगरा 30 अप्रैल– 01 मई, 1977)
2. पं0 ओंकार नाथ ठाकुर– ''प्रणव भारती'' (प्रथम तन्त्री, पृ0–3)
3. डॉ0 रामनरेश मिश्र हँस'– ''संगीत विज्ञान'' ('संगीत' पत्रिका वर्ष–44, अंक–5, मई 1978, पृ0–25)
4. आचार्य उत्तम राम शुक्ल– ''भारतीय संगीत'' ('संगीत', पत्रिका वर्ष–44, अंक–5, जून 1993, पृ0–37)
5. डॉ0 लालमणि मिश्र– ''भारतीय संगीत वाद्य (खण्ड–1, पृ0–1)
6. डा0 अरूण कुमार सेन– ('भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन (अ0–8, पृ0–186)
7. नर्मदेश्वर चतुर्वेदी– 'संगीत और सौन्दर्य' (स्मारिका–द्वितीय अखिल भारतीय तानसेन संगीत सम्मेलन, आगरा, 30 अप्रैल – 1 मई, 1977)
8. डा0 अरूण कुमार सेन– 'भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन' (अ0–1, पृ0–50)
9. डा0 लालमणि मिश्र– 'भारतीय संगीत वाद्य' (खण्ड–2, पृ0–8)